[2019] 1 उम. नि. प. 172

इमके ग्लोबल फाइनेंसियल सर्विसेस लि. (मैसर्स)

बनाम

गिरधर सोंढ़ी

20 अगस्त, 2018

न्यायमूर्ति रोहिंग्टन फली नरीमन और न्यायमूर्ति इन्दु मल्होत्रा

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 133 [सपठित माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 34(2)(क), (5) और (6)] – अपील – माध्यस्थम् मामलों की सुनवाई करने की अधिकारिता – पक्षकारों के बीच हुए करार में 'अनन्य अधिकारिता खंड' का उपबंध होना – अधिकारिता खंड में उल्लिखित न्यायालय के अलावा अन्य न्यायालय द्वारा माध्यस्थम् विवादों का निपटारा करना – यदि पक्षकारों के बीच एक विधिमान्य करार किया जाता है और उस करार में यह विहित किया जाता है कि यदि उनके बीच कोई विवाद उद्भूत होता है तो उसका निपटारा 'अनन्य अधिकारिता खंड' में उल्लिखित न्यायालय द्वारा ही किया जाएगा और इसलिए, यदि ऐसे न्यायालय के अलावा कोई अन्य न्यायालय उनके बीच उद्भूत विवादों का निपटारा करते हुए, कोई पंचाट देता है तो वह अवैध और अविधिमान्य होगा ।

वर्तमान मामले में, अपीलार्थी, जो नेशनल स्टॉक एक्सचेंज में एक रजिस्ट्रीकृत ब्रोकर है और प्रत्यर्थी, जो उसका मुवक्किल है, के बीच प्रतिभूतियों और शेयरों के कतिपय संव्यवहारों के बारे में विवाद से उद्भूत हुआ है । प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी के विरुद्ध 7,36,620/- रुपए की रकम का दावा करते हुए, माध्यस्थम् कार्यवाहियां आरंभ की थीं, जिसे एकल मध्यस्थ द्वारा तारीख 8 दिसम्बर, 2009 के माध्यस्थम् पंचाट द्वारा नामंजूर कर दिया गया था । यह सामान्य आधार है कि नेशनल स्टॉक एक्सचेंज ने श्री महमूद अली खान, जिन्होंने दिल्ली में बैठक की थी, को विवाद निर्दिष्ट किया था और उन्होंने तारीख 8 दिसम्बर, 2009 को एक पंचाट दिया था जिसके द्वारा प्रत्यर्थी के दावे को नामंजूर कर दिया गया था । उसके बाद, प्रत्यर्थी ने जिला न्यायालय, कड़कड़डूमा, दिल्ली के समक्ष तारीख 17 मार्च, 2010 को माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 34 के अधीन एक आवेदन फाइल किया । तारीख 22 सितम्बर, 2016 के निर्णय द्वारा विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश को करार में अंतर्विष्ट अनन्य अधिकारिता खंड

निर्दिष्ट किया गया और यह कथन किया गया कि उससे मामले में और कार्यवाही करने की अधिकारिता नहीं होगी और इसलिए, दिल्ली में फाइल धारा 34 के अधीन आवेदन नामंजूर कर दिया गया । इससे व्यथित होकर अपीलार्थी ने माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह स्पष्ट होता है कि जब एक बार मुम्बई के न्यायालयों को तारीख 3 जुलाई, 2008 के करार के साथ नेशनल स्टॉक एक्सचेंज उप-विधियों द्वारा अनन्य अधिकारिता प्रदत्त कर दी गई है तो यह स्पष्ट है कि यह मुम्बई न्यायलय ही है और मात्र मुम्बई के न्यायालयों के समक्ष ही धारा 34 के अधीन आवेदन फाइल किए जा सकते हैं । माध्यस्थम्, दिल्ली में संचालित किया गया था और यह नेशनल स्टॉक एक्सचेंज द्वारा केवल सुविधाजनक स्थान के रूप में चिन्हित किया गया था, जो अध्याय xi में अंतर्विष्ट उप-विधि 4(क)(iv) के साथ पठित (xiv) के परिशीलन से प्रकट होता है । इस प्रकार, यह प्रतीत होता है कि माध्यस्थम् विवाद्यकों का शीघ्रतापूर्वक हल करना ही अधिनियम, 1996 को अधिनियमित करने का कारण रहा है और पूर्वोक्त उद्देश्य को मजबूती प्रदान करने के लिए उक्त अधिनियम में संशोधनों को जोड़ने का कारण रहा है । नितांत तौर पर, सुस्पष्टतः, यदि विवाद्यक विरचित किए जाते हैं और धारा 34 के अधीन संक्षिप्त कार्यवाहियों में मौखिक साक्ष्य लिए जाते हैं तो इससे इसका उद्देश्य ही विफल हो जाएगा । रिकार्ड पर यह भी आया है कि यदि 2018 की विधेयक संख्या 100 पारित किया जाता है, तो धारा 34 में आवेदन के प्रक्रम पर साक्ष्य को पूर्णरूपेण छोड़ना होगा । विधि की वर्तमान दशा को ध्यान में रखते हुए, न्यायालय का यह मत है कि दिल्ली उच्च न्यायालय के दो पूर्ववर्ती निर्णय जिन्हें न्यायालय द्वारा इसमें उपर्युक्त उद्धृत किया गया है, धारा 34(2)(क) के अधीन 'सबूत देना है' के बारे में विधि की सही प्रास्थिति को दर्शाते हैं । न्यायालय को यह जोड़ने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि यदि प्रक्रिया में, पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के निर्णय का अनुसरण करते हुए एक वर्ष की अवधि सीमित की जाती है, तो कम ही मामलों में इसके भंग होने की संभावना हो सकती है । इसलिए, न्यायालय उक्त विनिश्चय को उलटता है । न्यायालय यह मत व्यक्त करने के लिए बाध्य है कि फिजा डेवलपर्स वाले मामले में, सही दिशा में कदम उठाया गया था क्योंकि इसका अंततोगत्वा निर्णयसार यह है कि विवाद्यकों को धारा 34 के अधीन आवेदन की सुनवाई के प्रक्रम पर खंडित करने की

आवश्यकता नहीं है जो एक संक्षिप्त प्रक्रिया है । तथापि, इस निर्णय का, अब धारा 34(5) और 34(6) में किए गए संशोधनों के प्रकाश में परिशीलन किया जाना चाहिए । इसलिए, न्यायालय, इसका परिशीलन करते हुए, विधि की प्रास्थिति को स्पष्ट करते हुए, यह कथन करते हैं कि एक माध्यस्थम् पंचाट को अपास्त करने के लिए आवेदन को मध्यस्थ के समक्ष अभिलेख के परे साधारणतया, कोई चीज अपेक्षित नहीं होगी । तथापि, यदि ऐसे अभिलेख में मामले अंतर्विष्ट नहीं हैं और धारा 34(2)(क) के अधीन उद्भूत होने वाले विवाद्यकों का अवधारण करने के लिए सुसंगत है तो वे दोनों पक्षकारों द्वारा फाइल शपथपत्रों के माध्यम से न्यायालय की नोटिस में लाए जा सकते हैं । शपथपत्रों को सशपथ करने वाले व्यक्तियों की प्रतिपरीक्षा तब तक मंजूर नहीं की जा सकती है जब तक कि इसकी पूर्णरूपेण आवश्यकता नहीं है, क्योंकि सत्य, दोनों पक्षकारों द्वारा फाइल शपथपत्रों के परिशीलन से प्रलक्षित होते हैं । इसलिए, न्यायालय दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय को अपास्त करता है और विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश द्वारा पारित तारीख 22 सितम्बर, 2016 के निर्णय को पुनः स्थापित करते हैं । तद्नुसार, अपील मंजूर की जाती है । (पैरा 10 और 22)

अवलंबित निर्णय

पैरा

[2009] (2009) 17 एस. सी. सी. 796 :
फिजा डेवलपर्स एंड इंटर-ट्रेड प्रा. लि. बनाम
ए. एम. सी. आई. (इंडिया) प्रा. लि. और एक अन्य । 14,15,16,17,20,22

निर्दिष्ट निर्णय

[2017] (2017) 7 एस. सी. सी. 678 :
इंडस मोबाइल डिस्ट्रीब्यूशन प्रा. लि. बनाम
डाटाविंड इन्नोवेशन्स प्रा. लि. और अन्य ; 6,9

[2017] (2017) एस. एल. पी. (सिविल) सं. 4475 :
बिहार राज्य और अन्य बनाम
बिहार राज्य भूमि विकास बैंक समिति ; 21

[2015] (2015) 15 एस. सी. सी. 522 :
कोचिन शिपयार्ड लि. बनाम **अपीजे शिपिंग लि.** ; 17

[2012] (2012) 9 एस. सी. सी. 552 :
भारत एल्युमिनियम कंपनी बनाम
कैसर एल्युमिनियम टेक्नीकल सर्विसेज इनकॉर्पोरेशन ; 9

[2012] (2012) एस. सी. सी. ऑन लाइन कलकत्ता 4271 :
डब्ल्यूईबी टेक्नीक्स एंड नेट सॉलुशन प्रा. लि. बनाम
मैसर्स गति लिमिटेड और एक अन्य ; 16

[2012] 2012 एस. सी. सी. ऑन लाइन पी एंड एच 19641 :
मैसर्स पंजाब स्टेट इंडस्ट्रीयल डेवलपमेंट कारपोरेशन बनाम **श्री सुनील के. कंसल** ; 15

[2005] ए. आई. आर. 2005 दिल्ली 95 :
सियॉल बायोइनर्जी बनाम **एस बी ई सी सिस्टम्स** ; 13

[2004] (2004) 3 माध्यस्थम् एल. आर. 306 :
संदीप कुमार बनाम **डा. अशोक हंस** । 12

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2018 की सिविल अपील सं. 8367.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 133 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री दिव्यकांत लाहोटी, (सुश्री) अमृता ग्रोवर और परिक्षित अहुजा, अधिवक्तागण

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री टी. पी. एस. कैंग, विवेक वर्मा और अरुप बनर्जी, अधिवक्तागण

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति रोहिंग्टन फली नरीमन ने दिया ।

न्या. नरीमन – इजाजत दी जाती है ।

2. वर्तमान अपील, अपीलार्थी, जो नेशनल स्टॉक एक्सचेंज में एक रजिस्ट्रीकृत ब्रोकर है और प्रत्यर्थी, जो उसका मुवक्किल है, के बीच प्रतिभूतियों और शेयरों के कतिपय संव्यवहारों के बारे में विवाद से उद्भूत हुआ है । प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी के विरुद्ध 7,36,620/- रुपए की रकम का दावा करते हुए, माध्यस्थम् कार्यवाहियां आरंभ की थी, जिसे एकल मध्यस्थ द्वारा तारीख 8 दिसम्बर, 2009 के माध्यस्थम् पंचाट द्वारा नामंजूर कर दिया गया था ।

3. यह अपील, तारीख 3 जुलाई, 2008 के एक करार से उद्भूत हुआ है, जिसमें निम्नलिखित खंड अंतर्विष्ट है :–

"साधारण खंड

1. इसके पक्षकार, निक्षेपागार अधिनियम, 1996, सेबी (निक्षेपक और भागीदार) विनियम, 1996 के उपबंधों का, सीडीएसएल द्वारा समय-समय पर जारी उसी तरीके के उप-विधियों और प्रवर्तित निर्देशों का और उसी सीमा तक जैसा यदि इसे इसमें बनाया जाता और इस करार का भाग बनाए जाता, का पालन करने के लिए सहमत हुए हैं ।"

* * * * *

"माध्यस्थम्

11. इसके पक्षकार, सभी विवाद्यकों और मतभेदों के संबंध में, जो उनके बीच उद्भूत हो सकते हैं, के बारे में, उप-विधियों के अधीन विनिर्दिष्ट माध्यस्थम् और सुलह से संबंधित उपबंधों का पालन करेंगे ।"

* * * * *

"अधिकारिता

12. इसके पक्षकार, मुम्बई न्यायालय, महाराष्ट्र, भारत की अनन्य अधिकारिता को स्वीकार करने के लिए सहमत हुए हैं ।"

4. यद्यपि, करार में निर्दिष्ट उप-विधियां, निक्षेपागार अधिनियम, 1996 के उपबंधों के अधीन है, यह सामान्य आधार है कि माध्यस्थम् कार्यवाहियां नेशनल स्टॉक एक्सचेंज उप-विधियों के अधीन की जाएगी । इन उप-विधियों के अधीन अध्याय VII में व्यापार करने वाले सदस्यों के व्यवहार और उप-विधियों के अधीन उद्भूत विवादों के संबंध में सिविल न्यायालय, मुम्बई, की अनन्य अधिकारिता प्रदान की गई है, जो निम्नलिखित है :–

"अध्याय VII

ट्रेडिंग सदस्यों द्वारा व्यवहार

अधिकारिता

स्वचालित एक्सचेंज ट्रेडिंग पद्धति के माध्यम से प्रविष्ट कोई व्यवहार या क्रय या विक्रय के लिए कोई प्रस्थापना या क्रय और विक्रय के लिए ऐसी किसी प्रस्थापना की कोई स्वीकृति, कंप्यूट्रीकृत, प्रोसेसिंग यूनिट एक्सचेंज, मुम्बई में प्रविष्ट की गई समझी जाएगी

और ट्रेडिंग करने वाले सदस्यों के बीच संविदा का स्थान मुम्बई होगी । एक्सचेंज के ट्रेडिंग सदस्य अभिव्यक्त तौर पर अपने संविदा नोट पर यह अभिलिखित करेंगे कि संविदा नोट से संबंधित या संबंध में उद्भूत होने वाले किसी विवाद के संबंध में मुम्बई के सिविल न्यायालयों के सिवाय अन्य सभी न्यायालयों की अधिकारिता को वर्जित करते हैं और यह कि मात्र मुम्बई के सिविल न्यायालयों को ही ऐसे विवाद्यकों से उद्भूत होने वाले दावों के बारे में अनन्य अधिकारिता होगी । इस उप-विधि के उपबंध, ट्रेडिंग सदस्यों और उनके संघटकों जिसका एक्सचेंज पक्षकार नहीं है, के बीच किसी विवाद्यक को विनिश्चित करने वाले किसी न्यायालय की अधिकारिता को आक्षेपित नहीं करेंगे ।"

5. उप-विधियां, विभिन्न क्षेत्रों के लिए माध्यस्थम् की सीटों का सृजन करने के लिए विनियमों के अधीन विहित सुसंगत प्राधिकारी का वर्णन करते हैं या माध्यस्थम् संचालित करने के लिए भौगोलिक स्थानों को विहित करती है और ऐसे न्यायालयों को विहित करती है जिनकी अधिनियम के प्रयोजन के लिए अधिकारिता होगी – देखें : अध्याय XI – माध्यस्थम् के बारे में – खंड 4(क)(iv) । इसी प्रकार, उपखंड (xiv) के अधीन प्रत्येक निर्देश के लिए माध्यस्थम् के स्थान और उन स्थानों जहां मध्यस्थ बैठक कर सकते हैं, का भी उल्लेख है । यह सामान्य आधार है कि नेशनल स्टॉक एक्सचेंज ने श्री महमूद अली खान, जिन्होंने दिल्ली में बैठक की थी, को विवाद निर्दिष्ट किया था और उन्होंने तारीख 8 दिसम्बर, 2009 को एक पंचाट दिया था जिसके द्वारा प्रत्यर्थी के दावे को नामंजूर कर दिया गया था । उसके बाद, प्रत्यर्थी ने जिला न्यायालय, कड़कड़डूमा, दिल्ली के समक्ष तारीख 17 मार्च, 2010 को माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 34 के अधीन एक आवेदन फाइल किया । तारीख 22 सितम्बर, 2016 के निर्णय द्वारा विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश को करार में अंतर्विष्ट अनन्य अधिकारिता खंड निर्दिष्ट किया गया और यह कथन किया गया कि उससे मामले में और कार्यवाही करने की अधिकारिता नहीं होगी और इसलिए, दिल्ली में फाइल धारा 34 के अधीन आवेदन नामंजूर कर दिया गया । उच्च न्यायालय के समक्ष फाइल अपील में, दिल्ली उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया :–

"4. तद्नुसार, चूंकि आक्षेपित निर्णय, साक्ष्य अर्थात् दस्तावेजी साक्ष्यों द्वारा समर्थित अभिसाक्ष्यों को देने से पक्षकारों को मंजूर किए

बिना और साक्षियों जो अभिसाक्ष्य देते, की प्रतिपरीक्षा करने के लिए अन्य पक्षकार को अवसर दिए बिना विवादित तथ्य के प्रश्न को विनिश्चित करता है, इसलिए यह आवश्यक है कि विवादित तथ्य के प्रश्नों जो दिल्ली के न्यायालयों की क्षेत्रिय अधिकारिता की मौजूदगी के बारे में है, निचले न्यायालय द्वारा इस प्रभाव का विवाद्यक विरचित करने और उस पर पक्षकारों को साक्ष्य देने की अनुज्ञा देने के पश्चात् विनिश्चित किया जाएगा ।

मुझे यह जोड़ने में कोई जल्दबाजी नहीं है कि मैंने क्षेत्रीय अधिकारिता के पहलू पर इसमें के पक्षकारों में से किसी के लिए या किसी के विरुद्ध एक या अन्य मताभिव्यक्तियां नहीं की हैं और क्षेत्रीय अधिकारिता का यह विवाद्यक निचले न्यायालयों द्वारा पक्षकारों को साक्ष्य देने के पश्चात् विनिश्चित किया जाएगा, यह ध्यान में रखते हुए के यदि वाद हेतुक का मुम्बई में उद्भूत होना साबित कर दिया जाता है और मुम्बई के न्यायालयों की क्षेत्रीय अधिकारिता प्रदत्त करने वाला एक अनन्य खंड है, उसके बाद यद्यपि अन्यथा ही दिल्ली के न्यायालयों की अधिकारिता है तो संभाव्यता, दिल्ली के न्यायालयों को क्षेत्रीय अधिकारिता का प्रयोग नहीं करना होगा ।

6. पक्षकार, तारीख 7 नवम्बर, 2017 को जिला और सेशन न्यायाधीश, पूर्वी कड़कड़डूमा न्यायालय के समक्ष उपस्थित हुए हैं और अब जिला और सेशन न्यायाधीश, माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 34 के अधीन विधि और वर्तमान आदेश में किए गए मताभिव्यक्तियों के अनुसरण में आक्षेपों का निपटारा करने के लिए सक्षम न्यायालय को चिन्हित करेगा ।

6. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने दोनों करार के साथ ही नेशनल स्टॉक एक्सचेंज की उप-विधियों में अन्तर्विष्ट अनन्य अधिकारिता खंड का अवलंब लिया है । उनके अनुसार, यह मामला सभी प्रकार से **इंडस मोबाइल डिस्ट्रीब्यूशन प्रा. लि.** बनाम **डाटाविंड इन्नोवेशन्स प्रा. लि. और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के नवीनतम निर्णय द्वारा आच्छादित है । उन्होंने धारा 34 को भी निर्दिष्ट किया और यह कथन किया कि उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए कई निर्णयों और इस न्यायालय के एक निर्णय के परिप्रेक्ष्य में, जब धारा 34(2)(क) में आवेदन करने वाले पक्षकार के बारे में

[1] (2017) 7 एस. सी. सी. 678.

करता है तो उस पक्षकार को उपधारा में दिए गए आधारों में से एक 'सबूत देना है' चाहिए, ऐसे सबूत को तथ्यो के शपथपत्र के माध्यम द्वारा ही दिया जाना चाहिए जो मध्यस्थ के समक्ष कार्यवाहियों के अभिलेख पर पहले से ही अंतर्विष्ट नहीं है । आगे, इस प्रक्रम पर संक्षिप्त विचारण अनुध्यात नहीं है, क्योंकि अन्यथा माध्यस्थम् विवाद्यकों को शीघ्र हल करने का संपूर्ण उद्देश्य विफल हो जाएगा । परिणामतः, विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा प्रथम विरचित विवाद्यक के प्रश्न पर पक्षकारों को जिला न्यायाधीश के पास वापस भेजना और उसके बाद साक्ष्यों पर, जिनमें साक्षियों जिन्होंने अभिसाक्ष्य दिया कि प्रतिपरीक्षा करना सम्मिलित था, पर विनिश्चित करने का आदेश देना गलत था ।

7. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल ने आक्षेपित निर्णय का समर्थन किया और यह तर्क दिया कि क्योंकि माध्यस्थम् की बैठक दिल्ली में हुई थी, इसलिए, दिल्ली के न्यायालयों को अधिकारिता थी, यद्यपि, ऐसी अधिकारिता की अनन्य अधिकारिता खंड केवल मुम्बई के न्यायालयों में निहित थी ।

8. धारा 34(2)(क) निम्नलिखित है :–

"34. माध्यस्थम् पंचाट अपास्त करने के लिए आवेदन – (1) माध्यस्थम् पंचाट के विरुद्ध, न्यायालय का आश्रय केवल उपधारा (2) या उपधारा (3) के अनुसार, ऐसे पंचाट की अपास्त करने के लिए आवेदन ही लिया जा सकेगा ।

(2) कोई माध्यस्थम् पंचाट न्यायालय द्वारा तभी अपास्त किया जा सकेगा, यदि –

(क) आवेदन करने वाला पक्षकार यह सबूत देता है कि –

(i) कोई पक्षकार किसी असमर्थता से ग्रस्त था ; या

(ii) माध्यस्थम् करार उस विधि के, जिसके अधीन पक्षकारों ने उसे किया है या इस बारे में कोई संकेत न होने पर, तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन विधिमान्य नहीं है ; या

(iii) आवेदन करने वाले पक्षकार को, मध्यस्थ की नियुक्ति की या माध्यस्थम् कार्यवाहियों की उचित सूचना नहीं दी गई थी, या वह अपना मामला प्रस्तुत करने में अन्यथा असमर्थ था ; या

(iv) माध्यस्थम् पंचाट ऐसे विवाद से संबंधित है जो अनुध्यात नहीं किया गया है या माध्यस्थम् के लिए निवेदन करने के लिए रखे गए निबंधनों के भीतर नहीं आता है या उसमें ऐसी बातों के बारे में विनिश्चय है जो माध्यस्थम् के लिए निवेदित विषय क्षेत्र से बाहर है :

परंतु यदि, माध्यस्थम् के लिए निवेदित किए गए विषयों पर विनिश्चयों को उन विषयों के बारे में किए गए विनिश्चयों से पृथक् किया जा सकता है, जिन्हें निवेदित नहीं किया गया है, तो माध्यस्थम् पंचाट के केवल उस भाग को, जिसमें माध्यस्थम् के लिए निवेदित न किए गए विषयों पर विनिश्चय है, अपास्त किया जा सकेगा ; या

(v) माध्यस्थम् अधिकरण की संरचना या माध्यस्थम् प्रक्रिया, पक्षकारों के करार के अनुसार नहीं थी, जब तक कि ऐसा करार इस भाग के उपबंधों के विरोध में न हो और जिससे पक्षकार नहीं हट सकते थे, या ऐसे करार के अभाव में, इस भाग के अनुसार नहीं थी ; या .....

* * * * *

9. अनन्य अधिकारिता खंड के प्रभाव के बारे में इस न्यायालय द्वारा कतिपय निर्णयों में विचार किया गया था, जिनमें से अत्यधिक नवीनतम निर्णय **इंडस मोबाइल डिस्ट्रीब्यूशन प्रा. लि.** (उपर्युक्त) में अंतर्विष्ट है । इस मामले में, माध्यस्थम् मुम्बई में किया जाना था और केवल मुम्बई के न्यायालयों के अनन्य अधिकारिता के अध्यधीन था । अधिनियम की धारा 2(1)(ङ) और अधिनियम की धारा 31(4) में अंतर्विष्ट 'न्यायालय' की परिभाषा को निर्दिष्ट करने के पश्चात्, इस न्यायालय ने **भारत एल्युमिनियम कंपनी** बनाम **कैसर एल्युमिनियम टेक्नीकल सर्विसेज इनकॉर्पोरेशन**[1] वाले मामले में, विद्वान् पांच न्यायाधीशों के निर्णय को निर्दिष्ट किया जिसमें न्यायिक बैठक की अवधारणा, जिसे इंग्लैंड के न्यायालयों में प्रस्तुत किया गया है, अब हमारी अधिकारिता का आधार है । कतिपय निर्णयों और विधि आयोग की रिपोर्ट को निर्दिष्ट करने के पश्चात्, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि :–

"19. पूर्वोक्त सभी उपबंधों का अवलोकन करने से यह दर्शित

[1] (2012) 9 एस. सी. सी. 552.

होता है कि न्यायिक बैठक का महत्व उल्लिखित है, यह अनन्य अधिकारिता खंड के सदृश्य है । वर्तमान मामले के तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि माध्यस्थम् की सीट मुम्बई में है और खंड 19 यह भी स्पष्ट करता है कि मुम्बई के न्यायालयों में अनन्य अधिकारिता निहित है । माध्यस्थम् विधि के अधीन, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की तरह जो न्यायालयों में वाद फाइल करने, को लागू होता है, 'सीट' के प्रतिनिर्देश एक ऐसी अवधारणा है, जिसे माध्यस्थम् खंड में पक्षकारों द्वारा तटस्थ स्थान के रूप में चयन किया जा सकता है । तटस्थ स्थान प्रतिष्ठित भाव में नहीं हो सकता, अधिकारिता – वाद हेतुक का भाग नहीं है, जो तटस्थ स्थान पर उद्भूत हो सकता है और न ही इसमें सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 16 से 21 के उपबंध लागू होते हैं । तथापि, माध्यस्थम् विधि, जैसा कि उपर्युक्त अभिनिर्धारित किया गया है, 'सीट' के महत्व को अवधारित करती है, तथ्य यह है कि 'सीट' मुम्बई है, जो पक्षकारों के बीच करार से उद्भूत होने वाले माध्यस्थम् कार्यवाहियों को विनियमित करने की प्रक्रिया के लिए अनन्य अधिकारिता के साथ मुम्बई के न्यायालयों में निहित है ।

20. यह सुस्थिर है कि जहां एक से अधिक न्यायालयों को अधिकारिता होती है वहां पक्षकारों के लिए अन्य सभी न्यायालयों को अपवर्जित करने का अधिकार खुला होता है । निर्णयज विधि का सर्वांगीण विश्लेषण करने के लिए, [देखें : स्वास्तिक गैसेस (प्रा.) लि. **बनाम** इंडियन ऑयल कारपोरेशन लि. (2013) 9 एस. सी. सी. 32 = (2013) 4 एस. सी. सी. (सिविल) 157] । इसका अनुसरण, बी ई सीमोज वान स्टारबर्ग निदेनथल **बनाम** छत्तीसगढ़ इंवेसटमेंट लि. [(2015) 12 एस. सी. सी. 225 = (2016) 1 एस. सी. सी. (सिविल) 427] वाले एक नवीनतम निर्णय में भी किया गया था । उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए, यह स्पष्ट होता है कि केवल मुम्बई के न्यायालयों को ही देश में सभी अन्य न्यायालयों को अपवर्जित करते हुए, अधिकारिता है, क्योंकि माध्यस्थम् की न्यायिक सीट मुम्बई में है । मामले में इस मत को ध्यान में रखते हुए, आक्षेपित निर्णय डाटाविंड इन्नोवेशन्स (प्रा.) लि. और अन्य **बनाम** इंडस मोबाइल डिस्ट्रीब्यूशन (प्रा.) लि. (उपर्युक्त) को अपास्त किया जाता है । आक्षेपित निर्णय द्वारा प्रदत्त व्यादेश, इस निर्णय की उद्घोषणा की तारीख से चार सप्ताह की अवधि के लिए निरंतर जारी रहेगा, ताकि प्रत्यर्थी, मुम्बई न्यायालय में धारा 6 के अधीन आवश्यक कदम उठा

सके । तद्नुसार, अपीलों को निपटाया जाता है ।"

10. इस निर्णय का अनुसरण करते हुए, यह स्पष्ट होता है कि जब एक बार मुम्बई के न्यायालयों को तारीख 3 जुलाई, 2008 के करार के साथ नेशनल स्टॉक एक्सचेंज उप-विधियों द्वारा अनन्य अधिकारिता प्रदत्त कर दी गई है तो यह स्पष्ट है कि यह मुम्बई न्यायलय ही है और मात्र मुम्बई के न्यायालयों के समक्ष ही धारा 34 के अधीन आवेदन फाइल किए जा सकते हैं । माध्यस्थम्, दिल्ली में संचालित किया गया था और यह नेशनल स्टॉक एक्सचेंज द्वारा केवल सुविधाजनक स्थान के रूप में चिन्हित किया गया था, जो अध्याय xi में अंतर्विष्ट उप-विधि 4(क)(iv) के साथ पठित (xiv) के परिशीलन से प्रकट होता है ।

11. तथापि, मामला, यहां शेष नहीं बचता है । विद्वान् एकल न्यायाधीश ने मामले की पूर्ण सुनवाई करने के लिए वापस भेजा है । उन्होंने अधिकारिता के संबंध में 'तथ्य के विवादित प्रश्न' के रूप में इसे निर्दिष्ट किया है ।

12. धारा 34(2)(क) में अभिव्यक्त 'सबूत देना है' का अभिप्राय क्या है ? दिल्ली उच्च न्यायालय ने हाल ही में **संदीप कुमार** बनाम **डा. अशोक हंस**[1] वाले मामले में निर्णय दिया जिसमें दिल्ली उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने विनिर्दिष्टतः यह अभिनिर्धारित किया कि धारा 34 के उपबंधों के अधीन पक्षकारों को कोई साक्ष्य देना अपेक्षित नहीं है । मध्यस्थ का अभिलेख सबूत देने के अनुक्रम में पर्याप्त होना अभिनिर्धारित किया था चाहे धारा 34 के अधीन आधार बनाए गए हों ।

13. पुनः, **सियॉल बायोइनर्जी** बनाम **एस बी ई सी सिस्टम्स**[2] वाले मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित किया कि :–

> "5. मेरे मत में एक माध्यस्थम् पंचाट के विरुद्ध उद्भूत आक्षेपों के प्रक्रम पर मौखिक साक्ष्य देने के लिए आवेदक/जीडी को अनुज्ञा मंजूर करने से अधिनियम, 1996 का संपूर्ण प्रयोजन पूरी तरह से विफल होता है । अधिनियम, 1996, आक्षेपों के शीघ्रतम निपटारे और न्यायालय द्वारा न्यूनतम हस्तक्षेप की अपेक्षा करता है जैसा कि अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों से प्रकट होता है, जो निम्नलिखित

---

[1] (2004) 3 माध्यस्थम् एल. आर. 306.

[2] ए. आई. आर. 2005 दिल्ली 95.

है :–

'4. विधेयक के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार हैं –

(ii) एक माध्यस्थम् प्रक्रिया के लिए उपबंध करना, जो विनिर्दिष्ट माध्यस्थम् की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए ऋजु, पर्याप्त और समर्थ हो' ।

* * * * *

* * * * *

(v) माध्यस्थम् प्रक्रिया में न्यायालयों की पर्यवेक्षणात्मक भूमिका को न्यूनतम करना ।

6. आक्षेपों के प्रक्रम पर मौखिक साक्ष्य देने की अनुज्ञा से अधिनियम के उपबंधों के कारण क्षेत्र सीमित होते हैं जो अधिनियम, 1996 के अधीन आदेशों को पूरी तरह से विफल करते हैं । मौखिक साक्ष्य देने की प्रक्रिया, आक्षेपों की सुनवाई की प्रक्रिया को लंबा करते हैं और इनका अनुसमर्थन नहीं किया जा सकता है ।

7. इसके अतिरिक्त, माननीय उच्चतम न्यायालय ने एफ. सी. आई. **बनाम** इंडियन काउंसिल फॉर आर्बिट्रेशन [(2003) 6 एस. सी. सी. 564] वाले मामले में, अधिनियम में निहित इसकी प्रकृति को निम्नलिखित वर्णित किया है –

'अधिनियम, 1996 में निहित विधायी आशय, माध्यस्थम् प्रक्रिया में न्यायालयों की पर्यवेक्षणात्मक की भूमिका को न्यूनतम करना है और बिना समय गवाएं सभी विरोधात्मक विवाद्यकों के लिए तर्क देने और माध्यस्थम् अधिकरण के समक्ष उसे उठाने के लिए मध्यस्थ को नामनिर्देशित/नियुक्त करना है ।'

8. तद्नुसार, मैं इन आवेदनों में कोई गुणागुण नहीं पाता हूं और इसमें की गई प्रार्थना को नामंजूर किया जाता है ।"

14. अब, हम **फिजा डेवलपर्स एंड इंटर-ट्रेड प्रा. लि.** बनाम **ए. एम. सी. आई. (इंडिया) प्रा. लि. और एक अन्य**[1] वाले मामले में, इस न्यायालय के निर्णय पर विचार करते हैं । इस मामले में, न्यायालय के समक्ष कठिन प्रश्न यह था कि क्या विवाद्यक, जैसा कि सिविल प्रक्रिया

[1] (2009) 17 एस. सी. सी. 796.

संहिता, 1908 के आदेश xiv, नियम 1 के अधीन अनुध्यात है, माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 34 के अधीन आवेदनों में विरचित किया जाना चाहिए । इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि :–

> "14. संक्षिप्त कार्यवाही में, प्रत्यर्थी को अपने आक्षेपों या लिखित कथन को फाइल करने का एक अवसर दिया जाता है । इसके पश्चात्, न्यायालय द्वारा पक्षकारों को क्रमशः अपने आधारों को साबित करने के लिए शपथपत्रों को फाइल करने की अनुज्ञा दी जाती है और यदि तर्कों की सुनवाई के पूर्व, यदि आवश्यक है, तो दूसरे पक्षकार द्वारा प्रतिपरीक्षा करने की अनुज्ञा दी जाती है । ऐसी कार्यवाहियों में विवाद्यकों को विरचित करना आवश्यक नहीं होता है । हमें यह जोड़ने में कोई हिचकिचाहट नहीं है जब यह कहा जाता है कि कथित विवाद्यक आवश्यक नहीं है तो इसका यह अभिप्राय नहीं है कि साक्ष्य आवश्यक नहीं है ।"
>
> * * * * *
>
> "17. अधिनियम के स्कीम और उपबंध, न्यायालयों के साथ ही माध्यस्थम् से संबंधित दो महत्वपूर्ण पहलुओं को प्रकट करते हैं । प्रथम, यह है कि माध्यस्थम् से संबंधित मामलों में न्यायालयों द्वारा न्यूनतम हस्तक्षेप किया जाना चाहिए । द्वितीय, यह है कि अत्यावश्यकता का भाव, निपटारा की तत्परता की अपेक्षा करते हुए, न्यायालय के समक्ष लाए गए माध्यस्थम् मामलों के प्रतिनिर्देश दर्शित होने चाहिए ।
>
> 18. अधिनियम, 1996 की धारा 5, यह उपबंध करता है कि तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अंतर्विष्ट कोई बात होते हुए भी अधिनियम, 1996 के भाग 1 द्वारा शासित मामलों में कोई न्यायिक प्राधिकारी हस्तक्षेप नहीं कर सकता है, सिवाय वहां जहां अधिनियम, 1996 में इस प्रकार के उपबंध है ।"
>
> * * * * *
>
> "21. इसलिए, हम विवेक में तीन कारकों को ध्यान में रखते हुए, प्रश्न की परीक्षा करेंगे । प्रथम, यह कि अधिनियम, 1996 एक विशेष अधिनियमिति है और धारा 34 विशेष उपचार के लिए उपबंध करता है । द्वितीय, यह कि एक माध्यस्थम् पंचाट को मात्र तभी अपास्त किया जा सकता है जब वर्तमान धारा 34 की उपधारा (2) में

उल्लिखित आधारों में से कोई एक हो । तृतीय, यह कि धारा 34 के अधीन की कार्यवाहियों को शीघ्रतापूर्वक करने की अपेक्षा होती है ।"

* * * * *

"24. दूसरे शब्दों में, अधिनियम, 1996 की धारा 34 के अधीन आवेदन उन कार्यवाहियों में एकल विवाद्यक है, जहां तथ्य ही ऐसा है कि आवेदन, अंतर्वलित विवाद्यक को घोषित करने के लिए उक्त विशिष्ट उपबंध के अधीन संस्थित किया गया है । विवाद्यक को विरचित करने के लिए और अधिक प्रयोग करना मात्र कार्यवाहियों को विलंब करना होगा । इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि विवाद्यकों को अधिनियम, 1996 की धारा 34 के अधीन आवेदनों में विरचित करने की आवश्यकता नहीं है ।"

* * * * *

"31. अधिनियम, 1996 की धारा 34 के अधीन आवेदन करना धारा 34(2) के अधीन आधारों में से किसी आधार के अस्तित्व को 'साबित' करने के लिए आवेदक को अवसर देने हेतु प्रत्यर्थी-प्रतिवादी द्वारा आक्षेपों के लिए उपबंध के साथ ही संक्षिप्त कार्यवाहियां होती हैं । आवेदक को सबूत में अपने साक्षियों के शपथपत्र फाइल करने की अनुज्ञा दी जाती है । तत्समानी अवसर, प्रत्यर्थी-प्रतिवादी को भी शपथपत्र द्वारा अपने साक्ष्य देने का अवसर दिया जाता है । जहां मामले में ऐसा अपेक्षित होता है वहां न्यायालय शपथपत्र को शपथ पर देने वाले व्यक्ति की प्रतिपरीक्षा करने की भी अनुज्ञा देता है । इसके पश्चात्, न्यायालय तर्कों और/या प्राप्त लिखित निवेदनों की सुनवाई करता है और मामले में विनिश्चय करता है । निःसंदेह, यह नियमित प्रक्रिया है । न्यायालय उक्त प्रक्रिया से भिन्न प्रक्रिया अपना सकता है, यह प्रत्येक विशिष्ट मामले या स्थानीय नियमों के तथ्यों पर निर्भर करता है । तथापि, यह स्पष्ट है कि विवाद्यकों को विरचित करना, जैसा संहिता, 1908 के आदेश 14 के नियम 1 के अधीन अनुध्यात है, अधिनियम, 1996 की धारा 34 के अधीन कार्यवाहियों की प्रक्रिया का आंतरिक भाग नहीं है ।"

15. **मैसर्स पंजाब स्टेट इंडस्ट्रीयल डेवलपमेंट कारपोरेशन** बनाम **श्री सुनील के. कंसल**[1] वाले मामले में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय ने

[1] 2012 एस. सी. सी. ऑन लाइन पी एंड एच 19641.

फिजा डेवलपर्स (उपर्युक्त) वाले मामले में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट करने के पश्चात् निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

"30. उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए, हम विरचित विधि प्रश्न का उत्तर निम्नलिखित देते हैं :–

(i) विवाद्यक, जैसा कि संहिता, 1908 के आदेश xiv के नियम 1 के अधीन यथाअपेक्षित है, नियमित वाद में विरचित होता है, न्यायालय द्वारा आज्ञापक तौर पर विरचित किया जाना अपेक्षित नहीं है । तथापि, यह न्यायालय के लिए खुला होता है कि वह उन प्रश्नों को विरचित करे जो न्यायनिर्णयन के लिए उद्भूत हो सकते हैं ।

(ii) न्यायालय, अधिनियम, 1996 की धारा 34 के अधीन आक्षेपों पर विचार करते समय, नियमित सिविल वाद की तरह पक्षकारों को साक्ष्य देने के लिए अवसर मंजूर करने के लिए बाध्य नहीं है । न्यायालय की अधिकारिता, अपीली अधिकारिता के सदृश्य होने से अधिक है ।

(iii) अधिनियम, 1996 की धारा 34 के अधीन न्यायालय के समक्ष कार्यवाहियां संक्षिप्त प्रकृति की होती है । यद्यपि, कुछ तथ्य के प्रश्नों या मिश्रित विधि और/या तथ्यों के प्रश्न विनिश्चित किए जाते हैं, न्यायालय, पक्षकारों को साक्ष्य में शपथपत्र देने की अनुज्ञा देते समय साक्षियों को प्रतिपरीक्षा के लिए समन कर सकता है, यदि अन्य पक्षकार द्वारा ऐसी अपेक्षा की जाती है । ऐसी प्रक्रिया में नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों, ऋजु और साम्या को ध्यान में रखा जाता है ।"

16. कलकत्ता उच्च न्यायालय ने **डब्ल्यूईबी टेक्नीक्स एंड नेट सॉलुशन प्रा. लि.** बनाम **मैसर्स गति लिमिटेड और एक अन्य**[1] वाले मामले में, **फिजा डेवलपर्स** (उपर्युक्त) वाले मामले को निर्दिष्ट करने के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया कि मौखिक साक्ष्य, धारा 34 के अधीन आवेदन में अपेक्षित नहीं होता है, जहां मध्यस्थ के समक्ष अभिलेखों से यह दर्शित होता है कि क्या याचियों ने अपनी नियुक्ति के संबंध में नोटिस प्राप्त किया था ।

17. **कोचिन शिपयार्ड लि.** बनाम **अपीजे शिपिंग लि.**[2] वाले मामले में,

---

[1] (2012) एस. सी. सी. ऑन लाइन कलकत्ता 4271.

[2] (2015) 15 एस. सी. सी. 522.

इस न्यायालय ने माध्यस्थम् अधिनियम, 1940 से उद्भूत होने वाले मामले में, **फिजा डेवलपर्स** (उपर्युक्त) वाले मामले के विनिश्चय का अनुसरण नहीं किया क्योंकि अधिनियम, 1940 की धारा 30 और 33 के अधीन फाइल आक्षेपों के लिए किसी भी प्रकार के मौखिक साक्ष्य देने की अपेक्षा नहीं होती है ।

18. न्यायमूर्ति बी. एन. श्रीकृष्णा समिति की भारत में माध्यस्थम् व्यवस्था के संस्थागत पुनर्विलोकन की नवीनतम रिपोर्ट में निम्नलिखित वर्णित है :–

> "5. ए. सी. ए. की धारा 34(2)(क) में संशोधन – ए. सी. ए. की धारा 34 की उपधारा (2)(क), कतिपय परिस्थितियों में, न्यायालय द्वारा माध्यस्थम् पंचाटों को अपास्त करने के लिए उपबंध करती है । माध्यस्थम् पंचाट को अपास्त करने के लिए आवेदन करने वाले पक्षकार को न्यायालय में सबूत देना होता है । सबूत देने की यह अपेक्षा, कुछ न्यायालयों में असंगत व्यवहार रहा है, जहां वे नियमित सिविल वाद की प्रक्रिया की तरह कार्य करते हुए धारा 34 की कार्यवाहियों में कार्य करते हैं । यह माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा फिजा डेवलपर्स एंड इंटर-ट्रेड प्रा. लि. **बनाम** ए. एम. सी. आई. (इंडिया) प्रा. लि. और एक अन्य वाले मामले में इस निर्णयज विधि के होते हुए भी कि धारा 34 के अधीन कार्यवाहियां उसी तरीके से नहीं की जानी चाहिए जिस तरीके से सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश xiv के नियम 1 के अधीन विवाद्यकों को विरचित करते समय सिविल वादों में की जाती है ।
>
> इसके प्रकाश में, समिति का यह मत है कि यह सुनिश्चित करने के लिए धारा 34(2)(क) में उपयुक्त संशोधन किए जा सकते हैं कि धारा 34 के अधीन कार्यवाहियां शीघ्रतापूर्वक की जाएं ।
>
> सिफारिश – माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 34(2)(क) में संशोधन किए जा सकते हैं, 'सबूत देना है' शब्दों के स्थान पर, 'माध्यस्थम् अधिकरण के अभिलेखों के आधार पर सिद्ध करना है' शब्द प्रतिस्थापित करते हुए ।"

19. हमें यह सूचित किया गया है कि माध्यस्थम् और सुलह (संशोधन) विधेयक, 2018, 2018 की विधेयक संख्या 100 के अधीन मूल अधिनियम की धारा 34(2)(क) में एक संशोधन अंतर्विष्ट है, जो

निम्नलिखित है :–

"मूल अधिनियम की धारा 34 में, उपधारा (2) में, खंड (क) में, 'सबूत देना है' शब्दों के लिए 'माध्यस्थम् अधिकरण के अभिलेख के आधार पर सिद्ध करना है' शब्द प्रतिस्थापित किए जाएंगे ।"

20. माध्यस्थम् विधि में एक और नवीनतम विकास हुआ है, जिसका उल्लेख करना आवश्यक है । **फिजा डेवलपर्स** (उपर्युक्त) वाले मामले के विनिश्चय के पश्चात् धारा 34, 2016 के अधिनियम 3 द्वारा संशोधित की गई थी, जिसके द्वारा उपधारा (5) और (6) को मूल अधिनियम में तारीख 23 अक्तूबर, 2015 के तत्काल प्रभाव से जोड़ा गया था । धारा 34(5) और 34(6) निम्नलिखित है :–

"34. माध्यस्थम् पंचाट को अपास्त करने के लिए आवेदन –

* * * * *

(5) इस धारा के अधीन कोई आवेदन किसी पक्षकार द्वारा दूसरे पक्षकार को पूर्व सूचना जारी करने के पश्चात् ही फाइल किया जाएगा और ऐसे आवेदन के साथ आवेदक द्वारा उक्त अपेक्षा के अनुपालन का पृष्ठांकन करते हुए एक शपथपत्र संलग्न किया जाएगा ।

(6) इस धारा के अधीन आवेदन का निपटारा यथाशीघ्र और किसी भी दशा में उस तारीख से जिसको उपधारा (5) में निर्दिष्ट सूचना दूसरे पक्षकार पर तामील की जाती है, एक वर्ष की अवधि के भीतर किया जाएगा ।"

21. **बिहार राज्य और अन्य** बनाम **बिहार राज्य भूमि विकास बैंक समिति**[1] वाले मामले में, इस न्यायपीठ के नवीनतम निर्णय में, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करने के पश्चात् कि पूर्वोक्त उपधारा में उल्लिखित एक वर्ष की अवधि निदेशात्मक है, निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया :–

"27. हमारी यह राय है कि बाम्बे और कलकत्ता उच्च न्यायालयों द्वारा उद्घोषित मत, विधि की सही दशा प्रस्तुत करते है । तथापि, हम यह जोड़ सकते हैं कि प्रत्येक न्यायालय को प्रयास करना चाहिए जिसमें धारा 34 के अधीन आवेदन फाइल किए जाते

[1] (2017) एस. एल. पी. (सिविल) सं. 4475.

हैं, आवेदक या न्यायालय द्वारा जैसे भी दशा हो, विरोधी पक्षकार को नोटिस तामील करने की तारीख से एक वर्ष की अवधि को कठोरता से लागू करना चाहिए । यदि न्यायालय धारा 34(3) में उल्लिखित अवधि व्यपगत होने के पश्चात् नोटिस जारी करता है तो प्रत्येक न्यायालय को उक्त आवेदन फाइल करने की तारीख से एक वर्ष की अवधि के भीतर धारा 34 के आवेदन को निपटाने का प्रयास करना चाहिए, इसी प्रकार के उपबंध वाणिज्यिक न्यायालय, वाणिज्यिक खंड और वाणिज्यिक अपील खंड, उच्च न्यायालय अधिनियम, 2015 की धारा 14 में भी उपबंधित किए गए हैं । यह उस उद्देश्य की पूर्ति करेगा जिसे संशोधन अधिनियम, 2015 के द्वारा धारा 13(6) जोड़ते हुए प्राप्त करने की ईप्सा की गई है ।

28. हम यह भी जोड़ सकते हैं कि वाणिज्यिक न्यायालय, वाणिज्यिक खंड और वाणिज्यिक अपील खंड, उच्च न्यायालय अधिनियम, 2015 की धारा 14 के साथ पठित धारा 10 द्वारा आच्छादित मामलों में, वाणिज्यिक अपील खंड अपने समक्ष फाइल अपीलों को यथाअनुध्यात छह माह की अवधि के भीतर निपटाने का प्रयास करेगा । अपीलों, जो इस प्रकार आच्छादित नहीं हैं, उनको भी शीघ्रतापूर्वक यथासंभव उस तारीख से एक वर्ष के भीतर अधिमानतापूर्वक निपटाने का प्रयास किया जाएगा, जिस तारीख को अपील फाइल की गई है..... ।"

22. इस प्रकार, यह प्रतीत होता है कि माध्यस्थम् विवाद्यकों का शीघ्रतापूर्वक हल करना ही अधिनियम, 1996 को अधिनियमित करने का कारण रहा है और पूर्वोक्त उद्देश्य को मजबूती प्रदान करने के लिए उक्त अधिनियम में संशोधनों को जोड़ने का कारण रहा है । नितांत तौर पर, सुस्पष्टतः, यदि विवाद्यक विरचित किए जाते हैं और धारा 34 के अधीन संक्षिप्त कार्यवाहियों में मौखिक साक्ष्य लिए जाते हैं तो इससे इसका उद्देश्य ही विफल हो जाएगा । रिकार्ड पर यह भी आया है कि यदि 2018 की विधेयक संख्या 100 पारित किया जाता है, तो धारा 34 में आवेदन के प्रक्रम पर साक्ष्य को पूर्णरूपेण छोड़ना होगा । विधि की वर्तमान दशा को ध्यान में रखते हुए, हमारा यह मत है कि दिल्ली उच्च न्यायालय के दो पूर्ववर्ती निर्णय जिन्हें हमारे द्वारा इसमें उपर्युक्त उद्धृत किया गया है, धारा 34(2)(क) के अधीन 'सबूत देना है' के बारे में विधि की सही प्रास्थिति को दर्शाते हैं । इसका अनुसरण कलकत्ता उच्च न्यायालय के निर्णय (उपर्युक्त)

में किया गया है । हमें यह जोड़ने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि यदि प्रक्रिया में, पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के निर्णय (उपर्युक्त) का अनुसरण करते हुए, एक वर्ष की अवधि सीमित की जाती है, तो कम ही मामलों में इसके भंग होने की संभावना हो सकती है । इसलिए, हम उक्त विनिश्चय को उलटते हैं । हम यह मत व्यक्त करने के लिए बाध्य है कि **फिजा डेवलपर्स** (उपर्युक्त) वाले मामले में, सही दिशा में कदम उठाया गया था क्योंकि इसका अंततोगत्वा निर्णयसार यह है कि विवाद्यकों को धारा 34 के अधीन आवेदन की सुनवाई के प्रक्रम पर खंडित करने की आवश्यकता नहीं है जो एक संक्षिप्त प्रक्रिया है । तथापि, इस निर्णय का, अब धारा 34(5) और 34(6) में किए गए संशोधनों के प्रकाश में परिशीलन किया जाना चाहिए । इसलिए, हम, इसका परिशीलन करते हुए, विधि की प्रास्थिति को स्पष्ट करते हुए, यह कथन करते हैं कि एक माध्यस्थम् पंचाट को अपास्त करने के लिए आवेदन को मध्यस्थ के समक्ष अभिलेख के परे साधारणतया, कोई चीज अपेक्षित नहीं होगी । तथापि, यदि ऐसे अभिलेख में मामले अंतर्विष्ट नहीं है और धारा 34(2)(क) के अधीन उद्भूत होने वाले विवाद्यकों का अवधारण करने के लिए सुसंगत है तो वे दोनों पक्षकारों द्वारा फाइल शपथपत्रों के माध्यम से न्यायालय की नोटिस में लाए जा सकते हैं । शपथपत्रों को सशपथ करने वाले व्यक्तियों की प्रति-परीक्षा तब तक मंजूर नहीं की जा सकती है जब तक कि इसकी पूर्णरूपेण आवश्यकता नहीं है, क्योंकि सत्य, दोनों पक्षकारों द्वारा फाइल शपथपत्रों के परिशीलन से प्रलक्षित होते हैं । इसलिए, हम दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय को अपास्त करते हैं और विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश द्वारा पारित तारीख 22 सितम्बर, 2016 के निर्णय को पुनः स्थापित करते हैं । तद्नुसार, अपील मंजूर की जाती है । खर्चे का कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

अपील मंजूर की गई ।

क.